IJMRSETM

e-ISSN: 2395 - 7639

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

Volume 8, Issue 1, January 2021

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 7.580

+91 99405 72462 +9163819 07438 ijmrsetm@gmail.com www.ijmrsetm.com

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

स्वतंत्रता-आंदोलन में आदिवासी-समाज व संस्कृति का योगदान

Dr. Sadhana Agarwal

Assistant Professor, Hindi Department, D.B.S. College, Govind Nagar, Kanpur, India

सार

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आदिवासी समाज की अहम भूमिका रही है, पूरे देश में लाखों आदिवासियों ने अपने प्राणों की आहुति देकर भारत को एक स्वतंत्र राष्ट्र बनाया है। भारत की सभ्यता निर्माण से लेकर आज तक के भारत में आदिवासी समाज की जो महती भूमिका रही है उसे इतिहास में उचित स्थान नहीं दिया गया। यह सवाल उन भारतीय इतिहासकारों पर खड़ा होता है जो स्वतंत्रता संग्राम के प्रथम सेनानी 1857 के विद्रोही मंगल पांडेय को बताते नहीं थकते। जबकि मंगल पांडेय से भी पहले 11 फरवरी 1750 में सुल्तानगंज जिला भागलपुर में जन्मे तिलखा माझी सन् 1784 में क्रांति का बिगुल बजा चुके थे। बाबा तिलका मांझी ने ऑगस्टस क्लीवलैंड, ब्रिटिश कमिश्नर [लेफ्टिनेंट] को राजमहल पर गुलेल से जान से मार दिया था। परिणामस्वरूप 1784 में अंग्रेजी सरकार उन्हें पकड़ने के बाद घोड़े की पूंछ में उन्हें बांधकर भागलपुर के अंग्रेजी आवास के चारो तरफ घुमाया गया और अंत में बरगद के पेड़ में टांगकर उन्हें शहीद कर दिया गया। उस वक्त मंगल पांडेय का जन्म भी नहीं हुआ था। लेकिन सवर्ण इतिहासकार आदिवासी शौर्य को नकारते हुये वीडी सावरकर ने पहली बार मंगल पांडेय को आज़ादी का प्रथम स्वंतन्त्रता संग्राम सेनानी घोषित किया। आदिवासी शौर्य की बात की जाय तो देश की आज़ादी के लिए 1855 का हूल विद्रोह सर्वविदित है। संताल की हूल क्रांति को आजादी की पहली लड़ाई माना जाता है। 30 जून 1855 को क्रांतिकारी नेता सिदो और कान्हू मुर्मू के आह्वान पर राजमहल के भोगनाडीह में 20 हजार संतालों ने ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ विद्रोह किया था। इस लड़ाई में फूलो मुर्मू और झानो मुर्मू ने अपने संथाल आदिवासी समुदाय के साथ अंग्रेजी हुकूमत का विरोध किया।

इन्हीं नायकों के ऐतिहासिक शौर्य में उलगुलान धरती आबा शहीद बिरसा मुंडा का नाम इतिहास में अमर है। जिन्होंने अपनी मात्र 25 साल की उम्र में अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ जो जंग छेड़ी उसने अंग्रेजी सरकार के परखच्चे उड़ा दिए। बिरसा मुंडा का जन्म झारखंड के रांची (खुटी) जिले के उलीहातु गाँव में हुआ था। उनके पिता सुगना पुर्ती (मुंडा) और माता-करमी पुर्ती था। विद्रोही बिरसा की प्रारंभिक शिक्षा साल्गा गाँव चाईबासा जी.ई.एल. चार्च (गोस्नर एवंजिलकल लुथार) विधालय से हुई। उनके माता पिता बिरसा मुंडा को अच्छी शिक्षा देकर उन्हें आगे बढ़ाना चाहते थे लेकिन स्कूलों की कमी के कारण उनका ईसाई मिशनिरी स्कूलों में दाख़िला कराया। जहाँ दाखिला लेने के लिए ईसाई नाम रखना ज़रूरी था इसीलिए बिरसा का एडमिशन बिरसा डेविड के नाम से हुआ। लेकिन बिरसा को यह बात पसंद नहीं आई इसीलिए उन्होंने अपने नाम से डेविड शब्द हटा दिया।

परिचय

उस दौर में झारखंड ही नहीं बल्कि पूरे देश में जाति, पाखंड, आडम्बर ज़मींदारी इत्यादि हावी था। जिसके चलते धर्म के ठेकेदारों के द्वारा ज़मींदारी बढ़ने लगी और सवर्ण ज़मींदार जब आदिवासियों की जमीने छीनने लगे तो आदिवासी समाज इस बाबत लामबंद हुआ और यह समय के साथ विद्रोह का रूप लेने लगा। बिरसा मुंडा ने ज़मींदारों की हड़प नीति की मुखालिफ़त करते हुए आदिवासी समाज का नेतृत्व किया।

झारखंड में छोटा नागपुर का नाम बहुत मशहूर है। नागवंश का इतिहास यहाँ से मिलता है। यहाँ के नागा आदिवासी पूरे भारत में बसे हैं। नागपुर शहर इन्हीं के नाम से जाना जाता है, जहाँ बाबा साहब ने 1956 में बौद्ध धम्म की दीक्षा लेते हुये इस ऐतिहासिक तथ्य की तरफ़ इशारा किया था कि "जिन लोगों को यह लगता है कि मैं नागपुर में इसीलिए बौद्ध धम्म ग्रहण कर रहा हूँ क्योंकि यहाँ आरएसएस का मुख्यालय है तो वह लोग गलत सोच रहे हैं बल्कि मैं नागपुर में इसीलिए बौद्ध धम्म की दीक्षा ले रहा हूँ क्योंकि यह धरती हमारे पूर्वज नागों की धरती है।"

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

अगर कश्मीर का इतिहास उठाकर देखे व उसकी भूगोलिक व राजनीतिक नामावली का जायजा लें तो यह पता चलता है कि वहाँ अनंतनाग नाम से एक जिला है जिसका ज़बरदस्ती नाम बदलकर इस्लामाबाद रखा गया है। उत्तर भारत में एक पर्व मनाया जाता है जिसे नाग पंचमी कहते हैं। इसमें पंचमी शब्द बुद्ध के पंचशील दर्शन को संबोधित करता है। इस दिन लोग अपने घरों में अच्छे पकवान बनाते हैं और पेड़ों पर झूला डालकर झूलते हैं। इस मौके पर महिलाएं कजरी गाती हैं और मौसम से संबंधित लोकरंग में डूबी संवेदनाओं का लोमहर्षक वर्णन करती हैं। और पुरूष कबड्डी व कुश्ती जैसे खेलों का आनन्द लेते हैं। इसके विपरीत सवर्ण संस्कृति के लोग इसी दिन कपड़े की गुड़िया बनाकर शाम के वक़्त सवर्ण लड़किया कतार बनाकर आती हैं और सवर्ण लड़के हाथ में डंडा लेकर आते हैं और कपड़े की गुड़िया को सवर्ण लड़कियाँ फेंकती हैं जिस को सवर्ण लड़के डंडों से पीटते हैं। उसके बाद लड़कियाँ लड़कों को घर से लाये पकवान खिलाती हैं। आदिवासी समाज स्वतंत्र संस्कृति का बाहक रहा है इसीलिए उसे किसी का उसके इलाके में जबरन घुसपैठ पसंद नहीं। आदिवासियों का मानना है कि उनके इलाके में कोई भी आये उसका स्वागत है लेकिन वहाँ रहकर अगर उनके जल-जंगल व ज़मीन को छीनने का प्रयास करे तो उन्हें पसंद नहीं। कुछ लोग आदिवासियों के खिलाफ भ्रामक प्रचार करते हैं कि आदिवासी किसी को अपने इलाके में आने नहीं देना चाहते। जबकि यह बात समझने का प्रयास बहुत कम लोग करते हैं अगर किसी के घर में जाकर कोई उसके घर को हड़पने की कोशिश करे तो यह किसी को भी पसन्द नहीं आएगा। फिर यह बात सभी पर लागू होती है न कि सिर्फ आदिवासियों पर। यही वजह थी कि अंग्रेज जब आदिवासी इलाक़ों में घुसपैठ करते हुये झारखंड पहुंचे और वहां आदिवासियों की जमीनों की हड़प नीति अपनाए और धर्म परिवर्तन कराना शुरू किये तो आदिवासी जिस तरह से स्थानीय ज़मींदारों व सामन्तों के खिलाफ मुखर होकर लामबंद हुये थे उससे भी ज़्यादा विद्रोही रुप में उन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ बगावत कर दिया।

उसका नारा था कि "अबुआ दिशुम अबुआ राज यानि हमारा देश हमारा राज"। यह अब्राहम लिंकन के नारे के ही समान है कि "जनता की सरकार जनता के द्वारा जनता के लिए"। बिरसा के अलख से जगह-जगह आदिवासी एकत्रित व संगठित होने लगे और तीर कमान के विद्रोह से देखते ही देखते पूरे झारखंड से अंग्रेजी सरकार के पैर उखड़ने लगे। इस सेना में आदिवासी पुरुषों के साथ महिलाएं भी कंधे से कंधा मिलाकर लड़ रही थीं। घबराई अंग्रेजी सरकार ने बिरसा मुंडा को पकड़ने के लिए 500 रुपये का ईनाम रखा। जिसके परिणाम स्वरूप जनवरी 1900 में जब बिरसा उलिहातू के नजदीक डोमबाड़ी पहाड़ी पर बिरसा अपनी जनसभा को सम्बोधित कर रहे थे, एक आदिवासी की मुखबिरी के कारण अंग्रेज सिपाहियों ने उन्हें चारो तरफ से घेर लिया। अंग्रेजों और आदिवासियों के बीच लड़ाई हुई। औरतें और बच्चों समेत बहुत से लोग मारे गये। अन्त में बिरसा 3 फरवरी 1900 को चक्रधरपुर में गिरफ़्तार कर लिये गये और कई दिनों की यातना देने के बाद उन्हें 9 जून सन 1900 में रांची की जेल में ही जहर देकर मार दिया गया। महज 25 साल की उम्र में बिरसा मुंडा ने क्रांति का ऐसा ऐतिहासिक बिगुल बजाया जिसने उन्हें करोड़ों लोगों के आदर्श के रूप में स्थापित कर दिया। तीर-कमान, भाला, फरसा, व गुलेल से अंग्रेजी सरकार के तोपों का मुकाबला करने वाला यह नौजवान आदिवासी समाज को यह सीख दे गया कि अपने वजूद की रक्षा के लिए एक चिंगारी भी ज्वाला बन सकती है। हर असमानता के ख़िलाफ़ विद्रोह का नाम बिरसा मुंडा है।

आज भी बिहार, उड़िसा, झारखंड, छत्तीसगढ और पश्चिम बंगाल के आदिवासी इलाकों में बिरसा मुण्डा को भगवान की तरह पूजा जाता है। इसीलिए उन्हें लोग धरती आबा के नाम से संबोधित करते हैं। बिरसा मुण्डा की समाधि राँची में कोकर के निकट डिस्टिलरी पुल के पास स्थित है। जहाँ उनकी प्रतिमा भी लगी है। उनकी स्मृति में रांची में बिरसा मुण्डा केन्द्रीय कारागार तथा बिरसा मुंडा हवाई-अड्डा भी है। आजादी के बाद से सत्ता में आई सरकारों ने आदिवादी समाज के प्रति जो दोहरा रवैया अपनाया है वह अत्यन्त निराशाजनक है। आदिवासी समाज आज भी अपने ही मुल्क में अपनी ही मिल्कियत से बेदखल किये जा रहे हैं। ऐसे में लोकतांत्रिक मूल्यों को स्थापित करने के लिए ऐसी सरकार की ज़रूरत है जिसका आदिवासी समाज अपेक्षित है। बहुजन समाज में जन्मे ऐसे नायक को मान्यवर कांशीराम अपना आदर्श मानते थे इसीलिए साईकिल से पूरे देश में गाँव-गाँव जाकर बहुजन नायक व नायिकाओं की वीरगाथा।लोगों को सुनाते व समझाते रहे। कहते हैं कि अपने इतिहास को पीढ़ी दर पीढ़ी प्रचारती करते रहना चाहिए नहीं तो विरोधी उस पर मिट्टी डाल देंगे।

विचार-विमर्श

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में झारखंड की जनजातियों का अप्रतिम योगदान रहा है। 1857 के प्रथम संग्राम के करीब 26 साल पहले ही झारखंड की जनजातियों ने अंग्रेजी शासन के खिलाफ विद्रोह किया था। झारखंड की सांस्कृतिक पहचान का राजनीतिक अर्थ भी पहली बार 1831 के कोल विद्रोह से उजागर हुआ था। उसमें मुंडा, हो, उरांव, भुइयां आदि जनजातियां शामिल हुईं। इस विद्रोह के केंद्र थे रांची, सिंहभूम और पलामू। ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ यह संभवत: पहला विराट आदिवासी आंदोलन था। इतिहासकार इस विद्रोह को झारखंड क्षेत्रा का विकराल अध्याय मानते हैं। हालांकि इसके पूर्व 1783 में तिलका मांझी का विद्रोह और 1795-1800 में चेरो आंदोलन पूरे झारखंड क्षेत्र में ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ सुलगती-फैलती 'जंगल की आग' का संकेत दे चुके थे। तिलका मांझी ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ संघर्ष की चेतना फैलाने वाले 'आदिविद्रोही' थे। उन्होंने 1772 में जमीन व फसल

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

पर परम्परागत अधिकार के लिए संघर्ष छेड़ा। उनके नेतृत्व में संघर्ष का संदेश गांव-गांव में सखुआ का पत्ता घुमाकर किया जाता था। तिलका मांझी ने सुलतानगंज की पहाड़ियों से छापामार युद्ध का नेतृत्व किया था। तिलका के तीरों से अंग्रेज सेना का नायक अगस्टीन क्लीवलैंड घायल हुआ। 1785 में तिलका मांझी को भागलपुर में फांसी दी गयी। वह स्थान आज भागलपुर में तिलका मांझी चौक के नाम से जाना जाता है।

कोल विद्रोह के पहले ही 1795-1800 तक तमाड़ विद्रोह, 1797 में विष्णु मानकी के नेतृत्व में बुंडू में मुंडा विद्रोह, 1798 में चुआड़ विद्रोह, 1798-99 में मानभूम में भूमिज विद्रोह और 1800 में पलामू में चेरो विद्रोह ने ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ विद्रोह की अटूट शृंखला कायम कर दी थी।

यह स्मरण रखना चाहिए कि छोटानागपुर का क्षेत्र 1765 ई. में अंग्रेजी राज में सम्मिलित हो चुका था लेकिन इस क्षेत्र पर कई-कई साल तक अंग्रेजों का पूर्ण आधिपत्य स्थापित नहीं हो सका। 1816-17 में छोटानागपुर के राजा की दंड-शक्ति पूरी तरह से छीन ली गयी। निरंतर जारी विद्रोहों की वजह से मजिस्ट्रेट और कलेक्टर के अधीन यहां प्रत्यक्ष शासन की स्थापना हुई। प्रत्यक्ष शासन के साथ शुरू हुई 'रेगुलेशन' की परिपाटी (बिहार में अंग्रेजी राज के विरुद्ध अशांति(1831-1859, संपादक: डा. कालीकिंकर दत्ता)।

छोटानागपुर क्षेत्र में हुए कोल विद्रोह के नायक थे सिंदराय और बिंदराय मानकी। यह विद्रोह 11 दिसम्बर, 1831 को फूट पड़ा। 19 मार्च 1832 को कैप्टन विल्किंसन के नेतृत्व में सेना की टुकड़ियों ने इस विद्रोह को दबा दिया।

संयुक्त कमिश्नर विल्किंसन और डेंट ने, जिनकी नियुक्ति उस विद्रोह को दबाने के लिए हुई थी, विद्रोह की वजहों को रेखांकित करते हुए अपनी रिपोर्ट में लिखा - ' पिछले कुछ वर्षों के भीतर पूरे नागपुर भर के कोलों पर वहां के इलाकादारों, जमींदारों और ठेकेदारों ने 35 प्रतिशत लगान बढ़ा दिये हैं। परगने भर की सड़कें उन्हें (कोलों को) बिना किसी मजदूरी के बेगारी द्वारा बनानी पड़ी थीं। महाजन लोग, जो उन्हें रुपये या अनाज उधार दिया करते थे, 12 महीने के भीतर ही उनसे 70 प्रतिशत और कभी-कभी उससे भी ज्यादा वसूल कर लेते थे। उन्हें शराब पर लगाये गये कर, जिसकी दर तो चार आना प्रति घर के हिसाब से निश्चित थी लेकिन जिसकी वसूली आम तौर पर इससे कहीं अधिक की जाती थी और उसके अलावे सलामी के रूप में प्रति गांव एक रुपया और एक बकरी भी ली जाती थी, से सख्त नफरत थी। कोलों को अफीम की खेती नापसंद थी। हाल में वहां एक ऐसी डाक प्रणाली चलायी गयी थी, जिसका पूरा खर्च गांव के कोलों को वहन करना पड़ता था। कोलों के बीच यह भी शिकायत का विषय था कि जो लोग बाहर से आकर नागपुर में बसे हैं, उनमें से बहुतों ने, जिनका कोलों पर बेतरह कर्ज लद गया है, अपने कर्ज की वसूली के लिए बहुत सख्ती की है। बहुत से कोलों को उनके नाम 'सेवक-पट्टा' लिख देना पड़ा है। यानी उनके हाथ अपनी सेवा तब तक के लिए बेच देनी पड़ी है, जब तक कर्ज अदा नहीं हो जाय। इसका मतलब है अपने आप को ऐसे बंधन में डाल देना कि उनकी पूरी कमाई का पूरा हकदार महाजन बन जाय और वे जीवन भर के लिए महाजन के दास बन जायें।'

बंगाल सरकार को 1 मार्च, 1833 को लिखे विल्किंसन का पत्र, संयुक्त कमिश्नर डेंट की ओर से बंगाल सरकार को भेजी गयी 4 अगस्त, 1833 की रिपोर्ट और 15 मार्च, 1832 को भेजी गयी रामगढ़ के मजिस्ट्रेट नीभ की रिपोर्ट से यह भी स्पष्ट होता है कि कोल विद्रोह में छोटानागपुर के कई जमींदार और राज परिवार शामिल थे। नागपुर के राजा और बसिया के कुंअर के बारे में अंग्रेज सरकार का ख्याल था - 'कई कारणों से राजा हमलोगों के आधिपत्य से छुटकारा पाने की इच्छा कर सकता है।' इसी तरह सिंहभूमि में वहां के राजा अचेत सिंह और उसके दीवान पर कोलों को विद्रोह के लिए उकसाने का अभियोग लगाया गया। मानभूमि में, जहां सबसे अंत में विद्रोह हुआ, भूमिज कोलों का नेतृत्व बड़ाभूमि के राजपरिवार के गंगानारायण सिंह कर रहे थे। उनके साथ उस इलाके के और भी कई कुअंर-जमींदार विद्रोह में शामिल थे। पलामू में चेरो और खरवारों ने अपने-अपने सरदारों के नेतृत्व में बगावत की।

1831 में कोल विद्रोह के फूटने की शुरुआती वजहों के बारे लिखते हुए विल्किंसन ने 12 पफरवरी, 1832 की अपनी रिपोर्ट में कहा - 'रांची जिला में ईचागुटू परगने के सिंहराय मानकी के 12 गांवों को कुछ बाहरी लोगों के हाथ ठीका दे दिया गया था। उन लोगों ने मानकी को न केवल बेदखल किया, वरन उसकी दो जवान बहनों को बहका कर उनके साथ बलात्कार भी किया था। इसी तरह एक बाहरी ठेकेदार ने सिंहभूमि जिले के बंद गांव में एक मुंडा के साथ अत्याचार किया और उसकी पत्नी को भगा कर उसकी इज्जत बिगाड़ दी थी। अत्याचार से पीड़ित लोगों को जब इन्साफ करने वालों के यहां से इन्साफ नहीं मिला, तो उन्होंने सोनपुर, तमाड़ और बंदगांव परगनों के सभी कोलों को तमाड़ में लंका नामक स्थान पर एकत्रित होने का आह्वान किया। वहां उन्होंने फैसला किया कि वे अब उन पर हो रहे अत्याचारों को बर्दाश्त नहीं करेंगे। वे विरोध में आग लगाने, लूटने और खून करने की कार्रवाई शुरू करेंगे।' 1832 में जनवरी के मध्य तक मुंडारी और उरांव लोग पूरे उत्साह से विप्लव में शामिल हो चुके थे (हंटर: स्टैटिस्टकल एकाउंन्टस, लोहरदगा)। आंदोलन ने शीघ्र ही एक राष्ट्रीय संघर्ष का रूप धारण कर लिया, जिसका स्पष्ट उद्देश्य था - विदेशियों से छुटकारा पाना(जे. रीड: रांची सेटलमेंट रिपोर्ट, पेज 23)।

कोल विद्रोह को दबाने के लिए अंग्रेजों को बड़े पैमाने पर सैनिक कार्रवाई करनी पड़ी। कलकत्ता, बनारस, संभलपुर,और नागपुर, सभी दिशाओं से अंग्रेजी पलटन भेजी गयी। कप्तान विल्किंसन छोटानागपुर पठार के उत्तरी छोर, पिथौरिया नामक स्थान पर 1832 में जनवरी के मध्य में पहुंचा। लेकिन उसका हमला फरवरी के मध्य में शुरू हुआ। पूरी सेना को तीन दलों में बांट कर पूरे प्रांत पर उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ते हुए हमला करने को कहा गया। भीषण संघर्ष हुआ। अंग्रेज सेना को बहुत नुकसान उठाना पड़ा। पिथौरिया और रांची के बीच नगरी के विद्रोहियों ने तो आखिरी दम तक लड़ने की कसम खायी थी। वहां अंग्रेजों ने खास सेना भेजी। उसे स्पष्ट आदेश था कि वह हमला, कत्ल और बर्बादी करे। अंग्रेजों की उस सेना का तीन-तीन हजार विद्रोही

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

कोल सैनिकों ने मुकाबला किया लेकिन अंग्रेज सेना की बर्बरता के सामने वे टिक नहीं सके। नगरी के बहादुर कोल विद्रोही एक-एक कर मारे गये। हंटर ने करीब 40 साल बाद 'स्टैटिस्टकल एकाउंट्स ऑफ बंगाल' नामक किताब लिखी। उसमें उसने लिखा - नगरी गांव के लोग आज भी ऐसे गीत गाते हैं, जो याद दिलाते हैं कि उनके पूर्वज 1832 में किस प्रकार वीरगति को प्राप्त हुए ।' नगरी पर कब्जा होते ही उत्तरी भाग के अधिसंख्य गांव अंग्रेजों के कब्जे में आ गये लेकिन पश्चिम के उरांव और दक्षिण-पूर्व के मुंडारी विद्रोही हथियार डालने को कतई तैयार नहीं थे। पलामू में खरवार लोगों का विद्रोह चरम पर था। यहां तक कि अंग्रेज घुड़सवार पलटन के एक जत्थे को, जो पलामू के रास्ते से छोटानागपुर में घुसने की कोशिश कर रहा था, चेतमा नामक पहाड़ी घाटी में विद्रोहियों के जबर्दस्त हमले का सामना करना पड़ा और हार कर भागना पड़ा। अंग्रेजों को लेस्लीगंज से भी हटना पड़ा और बनाथू नामक स्थान में छिपने को मजबूर होना पड़ा। अंग्रेज सेना के तीनों दलों को फिर से एक स्थान पर इकट्ठा कर हमला किया गया। तब जाकर विद्रोह दबा। विद्रोह के नायक बिंदराय मानकी ने, जो सिंहराय का भाई था, 19 मार्च, 1832 को आत्मसमर्पण किया। हालांकि कोल विद्रोह के शांत होते ही मानभूम जिले में भूमिज जनजातियों का विद्रोह शुरू हुआ। मानभूम (बड़ाभूमि, पातकुम आदि) और सिंहभूम(दालभूम) के कोलों ने बड़ाभूमि राजवंश के गंगनारायण सिंह के नेतृत्व में सशस्त्र आंदोलन शुरू किया। साल का अंत आते-आते विद्रोही नेता बिंदराय मानकी फिर से आंदोलन का नेतृत्व करने लगा, जिसे सरकार ने आत्मसमर्पण के बाद माफ करने की रणनीति अपनायी थी। 1833 के अंत में अंग्रेज सेना को उस बगावत को दबाने में सफलता मिली। गंगनारायण सिंह युद्ध करते हुए हिंदुसाही नामक स्थान पर मारा गया। उसकी वीरता से आतंकित अंग्रेजों की जान में जान तब आयी, जब उसका कटा सर कमिश्नर के सामने पेश किया गया। बिंदराय मानकी को घेर कर पकड़ने में भी अंग्रेज सेना सफल हुई। उसे हजारीबाग जेल में डाल दिया गया।

कोल विद्रोह दबा और तब छोटानागपुर क्षेत्र में अंग्रेजों का आधिपत्य हुआ। हालांकि उस विद्रोह का परिणाम यह हुआ कि 1833 में उस साल के 13वें अधिनियम के जरिये उस क्षेत्र से बंगाल सरकार के प्रचलित कानून हटा लिये गये। अंग्रेजों ने छोटानागपुर पर अपनी सत्ता की पकड़ मजबूत रखने के लिए दक्षिण पूर्व सीमा प्रांतीय एजेंसी नामक नन रेगुलेशन प्रांत का निर्माण किया। रांची को इसकी राजधानी बनाया गया। अंग्रेज प्रशासकों ने दालभूम को मिदनापुर से हटाकर मानभूम में मिला दिया। 1838 में जिला का मुख्यालय पुरुलिया को बनाया गया। 1837 में अंग्रेजों ने हो जनजाति को हराकर समझौता किया। कोल्हान क्षेत्र को दक्षिण पश्चिम प्रफंटियर एजेंसी में मिलाया गया। हो बहुल इलाके को कैप्टन थॉमस विल्किंसन ने आरक्षित जनजातीय क्षेत्र (कोल्हान गवर्नमेंट इस्टेट) का दर्जा दिया और प्रशासन के लिए परम्परागत मानकी-मुंडा पद्धति को वित्तीय व न्यायिक अधिकार प्रदान किये। उसे ही 'विल्किंसन रूल' कहा जाता है। इस रूल को आधार बना कर कोल्हान में आज भी स्वायत्तता के संघर्ष को जिंदा रखा गया है। हालांकि 1978-80 में उस संघर्ष का सूत्रपात करने वाले नेता के. सी. हेम्ब्रम पर आज भी राष्ट्रद्रोह का मुकदमा चल रहा है। वह भूमिगत जिंदगी जी रहे हैं। (इस अधयाय के अंत में इसकी विस्तार से चर्चा की गयी है)। परगना की पूरी जनता उठी और उसने विद्रोह की आवाज बुलंद की। लार्ड कार्नवालिस द्वारा लादी गयी 'स्थायी जमींदारी प्रथा' के खिलाफ हुए उस संघर्ष को संताल विद्रोह कहा जाता है। उस विद्रोह की लपटें संताल परगना और भागलपुर से लेकर बंगाल की सीमा और छोटानागपुर के हजारीबाग जिले तक फैलीं। उस वक्त के अंग्रेज अधिकारियों के अनुसार 'वीरभूम जिले में विद्रोह अत्यंत उग्र रूप धरण कर चुका था। वीरभूम के दक्षिण-पूर्व में ग्रैंड ट्रंक रोड पर स्थित तालडंगा से लेकर उत्तर-पूर्व में गंगा नदी के तट पर भागलपुर और राजमहल तक विद्रोह की भीषण आग फैली हुई थी। यहां तक कि दामोदर नदी और ग्रैंड ट्रंक सड़क से दक्षिण की ओर संतालों का बढ़ाव रोकने के लिए अंग्रेज गवर्नर जनरल की अंगरक्षक सेना और रामगढ़ घुड़सवार पलटन के साथ भारी फौज तैनात करनी पड़ी थी। उस फौज का अंदाजा इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि जब विद्रोह की आग बुझ रही थी, तब उस क्षेत्र में तीस हजार से अधिक विद्रोही हथियारबंद थे (बंगाल अंडर लेफ्टिनेंट गवर्नर्स: सी. ई. बकलैंड)। विद्रोहियों को खुले क्षेत्रों से निकालने में अंग्रेजों की जो फौज लगी, उसमें करीब 14-15 हजार सैनिक थे।

संताल लोग वर्तमान छोटानागपुर डिविजन एवं बांकुड़ा, पुरलिया और मेदिनीपुर जिलों की ओर से आकर 18वीं सदी के उत्तरार्ध(और 19वीं सदी के पूर्वार्ध में बिहार के पूर्वी क्षेत्र में बसे थे, जिसे आज झारखंड राज्य का संताल परगना क्षेत्र (पांच जिले - गोड्डा, साहेबगंज, पाकुड़, दुमका और देवघर)। कहा जाता है। 1832-33 में वह दामिन-ई-कोह शासन क्षेत्र के नाम से विख्यात हुआ था। 1837 से यह क्षेत्र शासन संबंधी कार्यों के दीवानी मामलों में जेम्स पौटेंट नामक एक सुपरिन्टेंडेंट के मातहत था और फौजदारी मामलों में भागलपुर के मजिस्ट्रेट के अधीन था। पूरे क्षेत्र के लिए केवल एक मजिस्ट्रेट देवघर में रहता था। न्याय पाने के लिए संतालों को अक्सर बहुत दूर अवस्थित भागलपुर, वीरभूम या ब्रह्मपुर की कचहरियों में जाना पड़ता था।

संताल विद्रोह का मुख्य कारण था - पछाहीं महाजनों और साहूकारों के शोषण और अत्याचारों के खिलाफ संतालों का आर्थिक असंतोष। ये महाजन और साहूकार दामिन-ई-कोह में अपने व्यापार के लिए बहुत बड़ी संख्या में बस गये थे। उन्होंने संतालों का शोषण कर बहुत थोड़े दिनों में बहुत सम्पत्ति जमा कर ली थी। वे बरसात के कुछ महीनों में संतालों को कुछ रुपये, कुछ चावल या कुछ अन्य सामान उधार देते थे और बड़ी चालाकी से कुछ ही दिनों में जीवन भर के लिए उनके भाग्य-विधता बन जाते थे (द संताल इन्सरेक्शन: डा. के. के. दत्ता, पाकुड़ के सरकारी अभिलेख)। कर्ज चुकाने में संतालों को अपनी जमीन से हाथ धेना पड़ता था और कई को कर्ज के बदले गुलामी स्वीकार करनी पड़ती थी - उन्हें अपने आप को साहूकारों का बंधुआ बनना पड़ता था। गुलामी की उस प्रथा को कानूनी अदालतों में स्वीकृति दी जाती थी।

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

उस दौर में संतालों के असंतोष की चिनगारी को विद्रोह की ज्वाला में बदला संताल परगना में भगनाडीह गांव के सिद्धू और उसके तीन भाई कान्हू, चांद और भैरव ने। 13 जून से 17 अगस्त, 1855 तक चंद दिनों में ही उन्होंने अपने कुशल नेतृत्व और पराक्रम से जनता में मुक्ति का ऐसा जज्बा पैदा किया कि अंग्रेजों को संतालों के खिलाफ फौजी कानून की घोषणा करनी पड़ी थी। विद्रोह की भीषण आग बुझाने के लिए लागू सैनिक कानून को 3 जनवरी, 1956 में वापस लिया गया । बागी सरदारों की गिरफ्तारी के लिए बड़े-बड़े इनामों की घोषणा की गयी। मुख्य सरदार के लिए दस हजार, दीवानों में से प्रत्येक के लिए पांच हजार और परगना-सरदारों के लिए एक-एक हजार । यहां तक कि विद्रोह को कुचलने के लिए दानापुर से अतिरिक्त सेना बुलायी गयी और मेजर जनरल लायड ने सैन्य संचालन का पूरा भार अपने हाथ में लिया।

हजारीबाग में उस विप्लव का नेतृत्व लुबिया मांझी, बैस मांझी और अर्जुन मांझी ने संभाला था। गोला, चास, कुजू, बगोदर आदि इलाकों में जनता ने खुल कर विद्रोहियों का साथ दिया। विद्रोहियों ने हजारीबाग जेल तक में आग लगा दी थी। विद्रोह में संताल और अन्य जातियों के हजारों लोगों ने अपनी कुर्बानी दी। उस विद्रोह को दबाने के लिए अंग्रेज सेना को एड़ी-चोटी का पसीना एक करना पड़ा। संताल विद्रोह के बाद ही संताल बहुल क्षेत्रा को भागलपुर और वीरभूम से अलग किया गया और उसे 'संताल परगना' नाम से वैधानिक जिला बनाया गया।

संताल विद्रोह की आग शांत हुई भी नहीं कि भारत की आजादी का पहला महासंग्राम 12 जून, 1857 को झारखंड क्षेत्र के रोहिणी नामक गांव से शुरू हुआ। उस गांव में मेजर मेकडोनल्ड के कमान में थलसेना की 32वीं रेजिमेंट थी। उस कमान के तीन सैनिकों ने विद्रोह कर लेपिफ्टनेंट नार्मन लेस्ली की हत्या कर दी। उस विद्रोह के परिणाम स्वरूप 16 जून को मेजर ने तीनों सैनिकों को फांसी पर लटका दिया। साथ ही रेजिमेंट को रोहिणाी से हटाकर भागलपुर ले जाया गया। इधार छोटानागपुर में उस महासंग्राम में बलिदानियों की कुर्बानी का यह आलम था कि दर्जनों विद्रोही नायकों को फांसी पर लटकाने के बावजूद अंग्रेज शासकों के पांव इस क्षेत्र से उखड़ गये। करीब एक साल तक छोटानागपुर क्षेत्र में अंग्रेजों का शासन ठप रहा। उस विद्रोह में रांची के ठाकुर विश्वनाथ शाहदेव, पांडेय गणपत राय, रामगढ़ बटालियन के जमादार माधे सिंह, डोरंडा बटालियन के जयमंगल पांडेय, पोड़ाहाट के राजा अर्जुन सिंह, विश्रामपुर के चेरो सरदार भवानी राय, टिकैत उमराव सिंह, पलामू के नीलाम्बर एवं पीताम्बर और शेख भिखारी, ब्रजभूषण सिंह आदि कई नेताओं ने बलिदानी भूमिका निभाई। 1858 में अंग्रेजी सेना ने उस विद्रोह को दबाया। 16 अप्रैल, 1858 को कर्नल डाल्टन ने रांची जिला स्कूल के पास ठाकुर विश्वनाथ शाहदेव को एक नीम के पेड़ से फांसी पर लटका दिया। 21 अप्रैल, 1858 को पांडेय गणपत राय को पफांसी दी गयी। इसी तरह टिकैत उमराव सिंह सहित दर्जनों नायक फांसी पर चढ़ गये।

1855-56 के संताल विद्रोह के बाद अंग्रेजों ने झारखंड क्षेत्र में आतंक के साथ-साथ प्रलोभन का साम्राज्य विकसित किया। इसकी वजह से 1857 के महासंग्राम के बाद पूरे झारखंड क्षेत्र में विद्रोह के स्वर कई सालों तक मंद रहे। स्थायी बंदोबस्ती कानून के जरिये नव जमींदारों को संरक्षण और धर्म परिवर्तन - इन दो हथियारों से अंग्रेज हुकूमत ने झारखंड क्षेत्र में अपने शासन को स्थायित्व प्रदान करने का प्रयास किया। जैसे-जैसे यह प्रयास बढ़ा, असंतोष भी बढ़ने लगा। लेकिन असंतोष को विस्पफोट में ढलने में करीब 26 साल लगे। जमींदारों को संरक्षण और धर्मातंतरण के खिलाफ 1881 में अंग्रेजों को सरदार विद्रोह के रूप में बड़ी चुनौती मिली। परम्परागत स्थानीय स्वशासन की प्रणाली के तहत चुने जाने वाले सरदारों ने मुंडा-उरांवों का एक राजा और राज्य स्थापित करने की घोषणा के साथ विद्रोह का बिगुल फूंका। स्वाधीन राज्य के समर्थन में विद्रोह की आग फैली। आदिवासियों ने जमींदारों को कर देना बंद कर दिया। ब्रिटिश हुकूमत ने सैनिक कार्रवाई के जरिये सरदार विद्रोह को दबाया। 19वीं शताब्दी का अंत आते-आते अंग्रेजों को यह एहसास होने लगा था कि झारखंड का आदिवासी जनजीवन संस्कृति की जिस अवधारणा से बंध है, वह सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक प्रणालियों के रूप में विकसित है। आदिवासियों की संस्कृति उनके स्वशासन की सामाजिक-राजनीतिक प्रणालियों में रूपबद्ध है। उन प्रणालियों को तोड़े बिना संस्कृति का वह 'जीवन रस' खत्म होने वाला नहीं, जो आदिवासियों को समाज के लिए कुर्बान होने, सामूहिकता और संघर्ष के लिए फिर- फिर उठ खड़े होने की ताकत देता है। यहां यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि 1891 में रांची में आर्य समाज की स्थापना हुई, जिसने आदिवासियों के शुद्धिकरण का अभियान चलाया। टाना 1895 में बिरसा आंदोलन शुरू हुआ तो ब्रिटिश हुकूमत को मालूम हो गया कि झारखंड में संस्कृति, धर्म और राजनीति के सूत्र एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं और उन सूत्रों से आदिवासी समाज में सामूहिक स्वशासन की लोकतांत्रिक प्रणालियां सदियों पहले विकसित हो चुकी हैं। उन प्रणालियों पर चोट किये बिना लोकतंत्र की आड़ में साम्राज्यवाद के विस्तार का अंग्रेज हुकूमत का सपना कभी साकार नहीं होगा।

बिरसा आंदोलन पूर्ण राजनीतिक स्वाधीनता के आंदोलन के रूप में प्रगट हुआ। अंग्रेज हुकूमत बिरसा आंदोलन को सरदार विद्रोह की कड़ी के रूप में देखती थी। लेकिन बिरसा के नेतृत्व में वह सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा के लिए पूर्ण स्वायत्तता और राजनीतिक स्वतंत्रता का आंदोलन बन गया था। बिरसा मुंडा ने 'अंग्रेजों अपनो देश वापस जाओ' का नारा देकर महान मुंडा उलगुलान का नेतृत्व किया। उन्होंने ब्रिटिश सत्ता को अस्वीकार करते हुए सरकार को लगान नहीं देने का फैसला किया। सामाजिक विषमता, आर्थिक शोषण और विदेशी सत्ता के खिलाफ बिरसा मुंडा ने ऐसे विराट आंदोलन का सूत्रपात किया कि पूरा झारखंड क्षेत्र उनके नेतृत्व में मुक्ति के लिए जैसे अंगड़ाई लेकर अचानक उठ खड़ा हुआ। आदिवासी समुदाय आदर्श समाज की कल्पना से प्रेरित होकर उनके लिए हर तरह की कुर्बानी देने को तैयार होने लगा। उनकी लोकप्रियता से ब्रिटिश हुकूमत पहले चिंतित हुई और फिर तो कांपने लगी। 24 अगस्त, 1895 को बिरसा को अचानक गिरफ्तार कर लिया गया। उन पर मुकदमा चला कर उन्हें कैद

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

की सजा दी गयी। अंग्रेज हुकूमत ने महारानी विक्टोरिया की हीरक जयंती के उपलक्ष्य में बिरसा को 1898 में मुक्त किया। उनके बाहर निकलते ही आंदोलन में और तेजी आ गयी। उनके नेतृत्व में हजारों क्रांतिकारी डोम्बारी पहाड़ी पर 8 जनवरी, 1900 को अंग्रेज हुकूमत की गोलियों के शिकार हुए। 3 पफरवरी, 1900 को बिरसा मुंडा पकड़ लिये गये। उन्हें रांची जेल लाया गया। 9 जून, 1900 को उनकी जेल में मृत्यु हुई।

1912 में बंगाल प्रोविंस से अलग कर बिहार राज्य की स्थापना हुई। उसके बाद झारखंड क्षेत्र में राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन कीरफ्तार फिर तेज हो गयी। उसमें टाना भगत आंदोलन की महत्वपूर्ण भूमिका रही। वह आंदोलन 1913-14 में शुरू हुआ। आंदोलन गुमला जिला के विशुनपुर थाना, चरपी नावा टोली के जतरा उरांव के नेतृत्व में शुरू हुआ। वह पिछले जनजातीय विद्रोहों से कुछ अलग था। वह धार्मिक सुधार आंदोलन के रूप में पनपा और विकसित हुआ लेकिन जल्द ही उसका राजनीतिक स्वरूप सामने आ गया। उसके तीन मुद्दे स्पष्ट थे –

1 स्वशासन का अधिकार

2 सारी जमीन ईश्वर की है, इसलिए उस पर लगान का विरोध

3 आदर्श समाज की स्थापना के लिए मनुष्य-मनुष्य के बीच गैरबराबरी का खात्मा।

धार्मिक पुनरुत्थान और जातीय परिष्कार के दौर से गुजरते हुए आंदोलन जब शोषण मुक्ति के संकल्प के रूप में व्यक्त हो रहा था, तो ठीक उसी वक्त देश में राष्ट्रीय आंदोलन के नेतृत्व की बागडोर सत्याग्रही गांधी के हाथ में आ चुकी थी। टाना भगत आंदोलन में शामिल नेता और कार्यकर्त्ता गांधी के व्यक्तित्व और कृतित्व से प्रभावित हुए। स्थानीय माना जाने वाला आंदोलन राष्ट्रीय आंदोलन का महत्वपूर्ण अंग बन गया। इस बीच झारखंड क्षेत्र कांग्रेस की राष्ट्रीय गतिविधियों का एक जरूरी केंद्र बना। 1915 में मौलाना अबुल कलाम आजाद को रांची के अपर बाजार स्थित वर्तमान आजाद उच्च विद्यालय में महीनों नजरबंद रखा गया। जून, 1917 में चम्पारण सत्याग्रह के सिलसिले में महात्मा गांधी जब बिहार के गवर्नर से मिलने रांची आये तो यहां उनका भव्य स्वागत किया गया। रांची में रौलट एक्ट और जलियांवालाबाग हत्याकांड के खिलाफ गुलाब तिवारी के नेतृत्व में लगातार आंदोलन चला। 1920 में रांची जिला कांग्रेस कमिटी की स्थापना हुई। 10 अक्टूबर, 1920 को दीनबंधु एन्ड्रूज की अधयक्षता में डालटनगंज में बिहार छात्र सम्मेलन हुआ। 1922 में कांग्रेस के गया अधिवेशन में टाना भगतों ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। वे रामगढ़, नागपुर और लाहौर के कांग्रेस अधिवेशनों में भी शामिल हुए। टाना भगतों के स्थानीय आंदोलन ने उनके पारम्परिक जीवन में आमूल परिवर्त्तन कर दिया था। आंदोलन के क्रम में टाना भगतों ने रहन-सहन, खान-पान और निजी व सामाजिक रीति-रिवाजों में परिवर्त्तन कर एक नया पंथ ही कायम कर लिया था। उनके लिए शराब और मांस का सेवन वर्जित था। रंगीन कपड़े और गहने धारण करना वर्जित था। शरीर को गोदना से सजाना मना था। शिकार खेलना, अखाड़ा में नाचना और जतरा में भाग लेने पर प्रतिबंध था। आजादी के संघर्ष के लिए भी सादा जीवन और उच्च विचार की राह की तलाश में टाना भगत जब गांधी विचारों के सम्पर्क में आये तो उनको महसूस हुआ कि उनके और गांधी के विचारों में साम्य है। सो टाना भगतों ने अपने जिस आंदोलन को आर्थिक और धार्मिक आधारों पर शुरू किया, उसे देश की आजादी के राजनीतिक आंदोलन का हिस्सा बनाने के क्रम में चरखा चलाना और खादी के सफेद कपड़े पहनना सहजता से स्वीकार किया। ऐतिहासिक घटनाओं की उपलब्ध सूचनाओं के अनुसार 1925 में महात्मा गांधी रांची आये तो उन्होंने टाना भगतों के क्षेत्रा का भी दौरा किया था। टाना भगतों ने महात्मा गांधी को अपना नेता माना और उनके नेतृत्व में आजादी के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने का संकल्प किया। ब्रिटिश हुकूमत ने उनकी जमीनें छीन लीं। उन पर हर तरह के जुल्म ढाये लेकिन टाना भगत समाज अपने लक्ष्य और दिशा से विचलित नहीं हुआ।

1920 से ही झारखंड क्षेत्र में आजादी के आंदोलन में संघर्ष और रचना के नये-नये आयाम विकसित होने लगे। यहां तक कि कई इलाकों में कांग्रेस के नेतृत्व में 'वन सत्याग्रह' भी चलाये गये। आदिवासी समाज को जंगल पर पुन: वैसा अधिकार प्राप्त हो, जैसा कि अंग्रेजों के आने के पहले था, यही उन सत्याग्रहों का मुख्य उद्देश्य था। 1930 में ये सत्याग्रह खरवार आंदोलन के नाम से चर्चित हुए। 1928-29 में छोटानागपुर उन्नति समाज का गठन हुआ, तो झारखंड क्षेत्र में 'आजादी' के वास्तविक अर्थ को उद्घाटित करने वाले राजनीतिक चिंतन की नयी प्रक्रिया शुरू हुई, जो ठीक आजादी के बाद झारखंड अलग राज्य की अवधरणा के रूप में स्पष्ट रूप से सामने आयी। छोटानागपुर उन्नति समाज ही आगे चलकर आदिवासी महासभा बना और देश आजाद होते ही झारखंड क्षेत्र में झारखंड पार्टी का उदय हुआ, जहां से झारखंड के इतिहास की नयी यात्रा शुरू हुई।

बहरहाल, ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ 1771 से लेकर 1947 तक जो विद्रोह और आंदोलन हुए, उनके दो सिरे थे। एक सिरा जंगल-जमीन जैसे जीवन यापन के मुद्दों की वजह से स्थानीय और प्रजाति विशेष के नेतृत्व से जुड़ा था और दूसरा सिरा सामाजिक-सांस्कृतिक मुद्दों की वजह से आजादी के सार्वदेशिक आंदोलन का अनिवार्य हिस्सा बना। इसीलिए किसी भी आंदोलन में विशेष प्रजाति का बाहुल्य होने के बावजूद अन्य तमाम समुदायों ने उसमें भाग लिया और स्थानीय नेतृत्व होते हुए भी हर आंदोलन ने अपनी सार्वदेशिक छवि पेश करने की कोशिश की। झारखंड क्षेत्र में ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ 150 साल में हुए विभिन्न आंदोलनों एवं विद्रोहों की एक-दूसरे से जुड़ी कड़ियों को देखे-समझे बिना भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास की व्याख्या संभव नहीं है। इतिहास के इस पूरे परिदृश्य के स्थानीय से लेकर राष्ट्रीय संदर्भ को और उनके बीच के सम्बंधों को गहराई से समझने के लिए तीन आंदोलनों का विशेष उल्लेख जरूरी है। एक संताल हूल, दूसरा बिरसा उलगुलान और तीसरा टाना भगत आंदोलन।

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

परिणाम

भारत अपनी स्वतंत्रता के 74 वर्ष पूरे कर स्वतंत्रता का 'अमृत महोत्सव' मना रहा है। ऐसे में देश के उन अमर सपूतों को याद किया जाना चाहिए जो प्राण हथेली पर लेकर स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े थे। इतिहास में स्वतंत्रता के अनेक नायकों का वर्णन मिलता है, परंतु बहुत से ऐसे नायक भी हैं, जिनके साथ इतिहास न्याय नहीं कर सका है। मुख्य रूप से 20वीं सदी के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास पर कांग्रेस के नेताओं का इतना अधिक प्रभाव है कि उसके आवरण में देश के विविध हिस्सों में स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वाले बहुत से नायक गुमनामी में धकेल दिए गए। वर्ष 1910 में बस्तर में आदिवासी समाज के आंदोलन 'भूमकाल' का नेतृत्व करने वाले गुंडाधुर इतिहास के ऐसे ही गुमनाम नायक हैं।

भूमकाल आंदोलन की बुनियाद वर्ष 1891 में पड़ी जब अंग्रेजों ने बस्तर के तत्कालीन राजा रूद्र प्रताप देव के चाचा कालेंद्र सिंह को दीवान पद से हटा दिया। रूद्र प्रताप देव अंग्रेजों के प्रति समर्पित राजा थे, लेकिन दीवान के रूप में प्रशासन का जिम्मा उनके चाचा कालेंद्र सिंह के पास था और वे इसे बेहतर ढंग से निभाते भी थे। आदिवासी समाज में उनकी अच्छी लोकप्रियता थी। ऐसे में कालेंद्र सिंह को दीवान पद से हटाकर पंडा बैजनाथ को बस्तर का प्रशासन सौंपा जाना आदिवासियों को पसंद नहीं आया। अति तब हो गई जब बैजनाथ के काल में अंग्रेजों द्वारा आदिवासियों पर अत्याचार शुरू कर दिए गए। जंगल बचाने के नाम पर आदिवासियों को उनके ही जंगलों से दूर किया जाने लगा। साथ ही उनके मतांतरण का प्रयास भी किया जाने लगा। ऐसी स्थिति में, कालेंद्र सिंह ने सूत्रधार की भूमिका निभाते हुए आदिवासियों को संगठित किया और गुंडाधुर के नेतृत्व में अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र भूमकाल आंदोलन की तैयारी शुरू हो गई।

उस दौर में गुंडाधुर की अधिकतम लोगों तक ऐसी पहुंच थी कि उनके विषय में अनेक किंवदंतियां फैलने लगीं। कोई कहता कि गुंडाधुर को उड़ने की शक्ति प्राप्त है तो कोई कहता कि वह लड़ाई के समय अपने जादू से अंग्रेजों की गोलियों को पानी बना देगा। इन किंवदंतियों से इतर गुंडाधुर की जमीनी योजना-रचना ऐसी थी कि आंदोलन शुरू होने से पूर्व अंग्रेजों को इसकी कोई भनक तक नहीं लगी। लाल मिर्च लिपटी आम की डाल जिसे 'डारा मिरी' कहा जाता था, उसके माध्यम से पूरे क्षेत्र में भूमकाल का संदेश प्रसारित किया गया। फरवरी 1910 में पूरे बस्तर में एक साथ भूमकाल का आगाज गुंडाधुर के संगठन कौशल और पक्की योजना का ही परिणाम था। आंदोलन की शुरुआत पुलिस चौकियों और सरकारी कार्यालयों पर हमले व बाजारों की लूट के रूप में हुई। देखते ही देखते, आंदोलनकारियों ने बस्तर के प्रमुख शहर जगदलपुर को छोड़ शेष बस्तर के अधिकांश क्षेत्रों पर अधिकार जमा लिया। अंग्रेज सिपाहियों और आजादी के मतवालों के बीच कई बार मुठभेड़ हुई, जिसमें तीर-धनुष और फरसा-भाला से लड़ने वाले आदिवासियों ने ब्रिटिश शासक के बंदूकधारी सिपाहियों को भागने पर मजबूर कर दिया। जगदलपुर के लिए चली अंग्रेज सेना को रास्ते में कड़े संघर्ष का सामना करना पड़ा, तब जाकर वो जगदलपुर पहुंच पाई। इस बीच अंग्रेजों को आभास हो गया था कि गुंडाधुर के कुशल नेतृत्व में लड़ रहे आंदोलनकारियों से सीधे लड़कर पार पाना आसान नहीं है, इसलिए उन्होंने छल की रणनीति अपनाते हुए आदिवासियों से बातचीत का नाटक किया। अंग्रेज सेना के कप्तान ने हाथ में मिट्टी लेकर कसम खाई कि आदिवासी लड़ाई जीत गए हैं और शासन का कामकाज उनके अनुसार ही चलेगा। भोले-भाले आदिवासी कुटिल अंग्रेजों की चाल नहीं समझ पाए और मिट्टी की कसम के झांसे में आ गए।

आंदोलनकारी अलनार में एकत्रित होकर अपनी विजय का जश्न मना रहे थे तभी रात में अंग्रेजों ने उन पर अचानक हमला कर दिया। इस हमले में बहुत आदिवासी हताहत हुए। लेकिन गुंडाधुर को पकड़ना तो दूर अंग्रेज उनकी शक्ल भी नहीं देख पाए। हालांकि बाद में सोनू माझी नामक एक आंदोलनकारी लोभवश अंग्रेजों से मिल गया जिस कारण गुंडाधुर के कुछ साथी पकड़ लिए गए। लेकिन तब भी अंग्रेज सरकार गुंडाधुर को नहीं पकड़ सकी। गुंडाधुर अंग्रेजों के लिए एक रहस्य ही बनकर रह गए। अंततः अंग्रेजों को गुंडाधुर की फाइल इस टिप्पणी के साथ बंद करनी पड़ी कि 'कोई यह बताने में समर्थ नहीं है कि गुंडाधुर कौन था।'

गुंडाधुर के अस्तित्व को लेकर अंग्रेजों की कोई भी राय रही हो, लेकिन बस्तर का आदिवासी समाज पूरी आस्था के साथ आज भी उन्हें अपना नायक मानता है। बस्तरवासी गुंडाधुर की याद में भूमकाल दिवस मनाते हैं। वर्ष 2014 में गणतंत्र दिवस के अवसर पर राजपथ पर निकली छत्तीसगढ़ की झांकी के केंद्र में गुंडाधुर को रखा गया था। यह उनके महत्व को दर्शाता है। लेकिन दुर्भाग्य कि देश के ऐसे नायक से आज देश की बड़ी आबादी परिचित नहीं है। भूमकाल 20वीं सदी का आंदोलन है, लेकिन इस दौर के आंदोलनों के इतिहास में इसकी चर्चा शायद ही कहीं हुई हो। भूमकाल और गुंडाधुर का इतिहास देश के हर व्यक्ति को जानना चाहिए, जिससे देश की युवा पीढ़ी न केवल स्वाधीनता आंदोलन में आदिवासी नायकों के योगदान से परिचित हो सके अपितु जल, जंगल और जमीन से जुड़ाव की प्रेरणा भी ले सके।

कूयिलि शिवगंगा की रानी वेलु नचियार की सेनाध्यक्ष थी। वेलु नेचियार उन पहले सम्राटों में से एक थी जिन्होंने 1780 के दशक में अंग्रेज़ों से लोहा लिया था। अंग्रेज़ों के खिलाफ इस युद्ध में कूयिलि ने अपने राज्य के लिए अपने प्राण न्योछावर कर दिए थे। कूयिलि के चाहने वाले उन्हें एक वीर योद्धा के रूप में याद करते हैं। कूयिलि का जन्म एक गरीब दलित परिवार में हुआ था। उनके पिता रानी के लिए एक जासूस के रूप में काम करते थे जिसके ज़रिए कूयिलि वेलु नचियार के करीब आई। उन्होंने कई बार रानी वेलु

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

रचियार के प्राणों की रक्षा की जिसके बाद उन्हें रानी के अंगरक्षक के रूप में तैनात किया गया और आगे चलकर वह महिला सेना की सेनाध्यक्ष बनी। जब शिवगंगा के महल पर अंग्रेज़ों का हमला हुआ तब उन्होंने वीरता के साथ उनका सामना किया। कूयिलि और उनकी सेना ने अंग्रेज़ों के हथियार छिपाकर उन्हें सकते में डाल दिया। सिर्फ इतना ही नहीं, कूयिलि ने अंग्रेजों के हथियार के जखीरे को बर्बाद करने के लिए अपने शरीर को तेल में डुबोया और आग लगा ली। एक दलित महिला के रूप में उनकी वीरता और जिस बहादुरी के साथ उन्होंने अंग्रेज़ों का सामना किया उसे हमेशा याद किया जाना चाहिए।

झलकारी बाई को हमेशा रानी लक्ष्मीबाई की सबसे विश्वसनीय सलाहकार और साथी के रूप में याद किया जाता है। झलकारी बाई एक कोरी जाति से तालुक्क रखने वाली एक दलित योद्धा थी। उन्होंने साल 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। झलकारी बाई का जन्म 2 नवंबर, 1830 में झांसी के निकट स्थित एक गांव में हुआ था। एक उत्पीड़ित जाति से होने के कारण झलकारी बाई को बुनियादी शिक्षा से वंचित होना पड़ा था लेकिन उन्होंने घुड़सवारी और हथियार चलाने की शिक्षा ज़रूर ली। छोटी उम्र से ही वह अपने आस-पास डकैतों और जगंली जानवरों से लड़ने की कहानियां सुनती आई थी।

झलकारी बाई की वीरता और उनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर झांसी की रानी लक्ष्मी बाई ने उन्हें अपनी महिला सेना में शामिल किया जहां अंग्रेज़ों से लड़ने के लिए झलकारी बाई को बंदूक चलाना और तोप चलाना सिखाया गया। रानी लक्ष्मीबाई और झलकारी बाई की कद-काठी काफी मिलती-जुलती थी इसलिए झलकारी बाई ने रानी का वेश धरकर लड़ाई भी लड़ी। उन्हें युद्ध और उसे जुड़े नतीजों के बारे में अच्छे से पता था लेकिन उन्होंने अपने फैसले के बारे में दोबारा नहीं सोचा और दुश्मनों से लड़ने के लिए उनके ही कैंप में चली गई। झलकारी बाई की मौत की वजह आज तक स्पष्ट नहीं है, इसके इर्द-गिर्द कई कहानियां गढ़ी गई हैं। स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में भी झलकारी बाई का उल्लेख बेहद कम देखने को मिला क्योंकि दलित महिला स्वतंत्रता सेनानियों का इतिहास बमुश्किल ही दर्ज किया गया है।

दलित स्वतंत्रता सेनानी उदा देवी और उनकी वीरांगनाओं ने सन् 1857 की लड़ाई के दौरान वीरता के साथ ब्रिटिश साम्राज्य का सामना किया था। उदा देवी ने बेगम हज़रत महल से गुज़ारिश की थी कि वह उन्हें एक सेनानी के तौर पर शामिल करें और उन्हें एक महिला सेना तैयार करने की इजाज़त दें। उदा देवी का जन्म अवध (अब उत्तर प्रदेश) के एक छोटे से गांव में हुआ था। वह पासी जाति से तालुक्क रखती थी। आज भी हर साल 16 नवंबर को पासी समुदाय के लोग स्वतंत्रता संग्राम में उदा देवी के संघर्ष और योगदान का जश्न मनाते हैं। उन्हें लोग एक बहादुर दलित महिला के रूप में याद करते हैं जिसने पितृसत्ता और ब्राह्मणवाद दोनों का ही सामना किया और उसे पराजित किया।

हेलेन लेपचा का जन्म साल 1902 में सिक्किम के नामची के एक छोटे से गांव सांगमू में हुआ था। ब्रिटिश साम्राज्य में रह रही हेलेन महात्मा गांधी के चरखा आंदोलन से बेहद प्रभावित हुई थी। साल 1920 में बिहार में आई भीषण बाढ़ के दौरान उन्होंने राहत कार्य में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था। उनके काम से प्रभावित होकर महात्मा गांधी ने उन्हें साबरमती स्थिति अपने आश्रम बुलाया और उन्हें सावित्री देवी का नाम दिया।.

ब्रिटिश साम्राज्य सावित्री देवी के विद्रोही स्वभाव से परिचित हो गए थे इसलिए उनके खिलाफ एक वारंट जारी कर दिया। ब्रिटिश साम्राज्य के लिए सावित्री देवी कांग्रेस की सबसे वांछित नेताओं में से एक बन गई। एक बार उनके ऊपर गोली भी चलाई गई लेकिन वह बच निकली। सरोजनी नायडू, जवाहर लाल नेहरू, मोरारजी देसाई से उनके संबंध अच्छे हो गए और वे उनके साथ मिलकर काम करने लगी। असहयोग आंदोलन में भी सावित्री देवी का योगदान अहम था। उन्होंने झरिया के कोयला खदानों में काम करने वाले मज़दूरों के साथ मिलकर एक बड़ी रैली भी आयोजित की थी। असहयोग आंदोलन में लोगों की सहभागिता बढ़ाने के लिए सावित्री देवी ने घर-घर जाकर इसका प्रचार भी किया था जिसके लिए उन्हें बाद में जेल भेज दिया था। ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ आंदोलन करने के साथ-साथ उन्होंने सामाजिक सरोकार से जुड़े मुद्दों पर भी काम करना शुरू किया और वह विभिन्न संस्थानों की अध्यक्ष भी रही।

नागाओं की रानी के नाम से मशहूर रानी गाइदिनल्यू ने महज़ 16 साल की उम्र में ही ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ जारी आंदोलन में हिस्सा लिया था। रानी गाइदिन्ल्यू का जन्म 26 जनवरी 1915 में मणिपुर के तमेंगलोंग जिले के तौसेम उप-खंड के नुन्काओ नामक गांव में हुआ था। रानी गाइदिनल्यू जीलियांगरोंग नगा समुदाय से तालुक्क रखती थी। बुनियादी शिक्षा न होने के बावजूद रानी गाइदिन्ल्यू अपने चचेरे भाई हाईपू जदोनांग के साथ मिलकर राजनीतिक आंदोलनों के संपर्क में आई। उन्होंने हेराका आंदोलन में भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था। उन्होंने अपने समुदाय के लोगों को ब्रिटिश साम्राज्य को दिए जाने वाले कर के खिलाफ भी जागरूक किया था। ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ उनकी बढ़ती गतिविधियों को देखते हुए ब्रिटिश अफसर उन्हें जल्द से जल्द गिरफ्तार करना चाहते थे। आगे चलकर उन्हें ब्रिटिश साम्राज्य ने गिरफ्तार कर लिया था और उन्हें कोहिमा ले जाया गया था। रानी गाइदिनल्यू के साथियों में से अधिकतर लोगों को या तो मौत की सज़ा दी गई या जेल में डाल दिया गया था। करीब 14 सालों बाद उन्हें साल 1947 में भारत के स्वतंत्र होने के बाद जेल से रिहा किया गया था। रिहा होने के बाद भी वह पिछड़े वर्ग के उत्थान के लिए काम करती रही।

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

निष्कर्ष

पुत्तलिमया देवी पोद्दार, एक गोरखा महिला थी जिनका जन्म 14 जनवरी, 1920 को कुर्सियांग में हुआ था। उन्हें अपने समुदाय में साम्राज्यवादी और सामाजिक ढांचे के ख़िलाफ़ संघर्ष करने के लिए ख्याति प्राप्त है। जब वो महज़ 14-15 साल की थी तभी उनकी इच्छा थी कि वह अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ संघर्ष में कांग्रेस के साथ जुड़ जाए। साल 1936 में जब कुर्सियांग में कांग्रेस कमेटी का दफ़्तर बना, तभी जाकर पुत्तलिमया के स्वतंत्रता सेनानी बनने का सपना पूरा हो सका। हालांकि इस दौरान उनके पिता उन्हें हतोत्साहित करते रहे। उन्होंने कुर्सियांग में 'हरिजन समाज' की भी स्थापना की थी जो दलित और शुद्रों को शिक्षा दिलाने में एक अहम भूमिका निभा रहा था। उन्होंने एक महिला संस्थान की भी स्थापना की थी जो लड़कियों को स्वतंत्रता सेनानी बनने के लिए प्रेरित और उनके अंदर देश प्रेम की भावना जगाने का काम करता था। उन्हें पुलिस की तरफ से लगातार चेतावनी दी जाती थी और पुलिस थाने भी बुलाया जाता था लेकिन इन रुकावटों के बावजूद वह अपने काम में लगी रही। 8 अगस्त 1942 के दिन कुर्सियांग में बड़े नेताओं की गिरफ्तारी के कुछ दिनों बाद उन्हें भी गिरफ्तार कर लिया गया था। भारत के आज़ाद होने के बाद भी वह बतौर समाज सेविका काम करती रहीं। उन्हें 'समाज सेविका' और 'ताम्र पत्र' जैसे सम्मान से भी नवाज़ा गया। आम लोग उन्हें 'माताजी' कह कर बुलाते थे। 1 दिसबंर 1984 में उन्होंने इस दुनिया को अलविदा कह दिया था।

ये महिलाएं उन समुदायों से तालुक्क रखती हैं जिन्हें सामाजिक और आर्थिक रूप से कभी बराबरी के अधिकार नहीं दिए गए। लेकिन इन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य की गुलामी के खिलाफ लड़ाई लड़ने में कोई कसर नहीं छोड़ी। चाहे वह ब्राह्मणवाद हो या अंग्रेज़ों की सत्ता, ये महिलाएं हर दमनकारी व्यवस्था से आज़ाद होने की चाहत और हौसला रखती थी। इन महिलाओं की गाथा किताबों, कहानियों में हमेशा जीवित रहनी चाहिए तभी मौजूदा भारत सही मायनों में आज़ाद भारत की परिभाषा को पूर्ण करेगा।

प्रधानमंत्री ने कहा कि मेरा ये अनुभव रहा है कि जीवन के महत्वपूर्ण कालखंड को मैंने आदिवासियों के बीच बिताया है। जीवन जीने का कारण, जीवन जीने के इरादे को आदिवासी परंपरा बखूबी प्रस्तुत करती है। उनके नृत्य संगीत संदेश देते है। मैंने उनको समझने का प्रयास किया। पीएम ने एक गीत के भावों को इस तरह व्यक्त किया- शरीर चार दिनों का है। अंत में मिट्टी में मिल जाएगा। खाना-पीना खूब किया। मौज मस्ती में उमर बिता दी। जीवन सफल नहीं किया। अपने जीवन में लड़ाई झगड़ा खूब किया। घर में उत्पात भी किया। जब अंत समय आया तो मन में पछताना व्यर्थ है। धरती खेत खलियान किसी के नहीं हैं। अपने मन में गुमान करना व्यर्थ है। यह धन दौलत कोई काम के नहीं है। इसे यहीं छोड़कर जाना है।

प्रधानमंत्री ने कहा कि शिवराज सरकार ने आदिवासी समाज के लिए कई योजनाएं शुरू की हैं। सिकल सेल एनीमिया उन्मूलन जैसी योजना से आदिवासियों का कल्याण होगा। उन्होंने कहा कि अब जब गांव में आपके घर के पास सस्ता राशन पहुंचेगा तो आपका समय भी बचेगा और अतिरिक्त खर्च से भी मुक्ति मिलेगी।

प्रधानमंत्री ने कहा कि मुझे खुशी है कि मध्यप्रदेश में जनजातीय परिवारों में तेजी से मुफ्त टीकाकरण भी हो रहा है। दुनिया के पढ़े-लिखे देश में भी टीकाकरण पर सवालिया निशान लगाने को लेकर भी खबरें आती हैं, लेकिन मेरे आदिवासी भाई-बहन टीकाकरण के महत्व को समझते हैं। पढ़े-लिखे लोगों को आदिवासियों से सीखना चाहिए।

पीएम मोदी ने कहा कि आज यहां भोपाल आने से पहले रांची में बिरसा मुंडा स्वतंत्रता सेनानी म्यूजियम का लोकार्पण करने का सौभाग्य मिला है। आजादी के नायकों की वीर गाथाएं देश के सामने लाना हमारा कर्तव्य है। गुलामी के कालखंड में विदेशी शासन के खिलाफ मीजो आंदोलन, कोल आंदोलन समेत कई संग्राम हुए। गौंड महारानी वीर दुर्गावती का शौर्य हो या फिर रानी कमलापति का बलिदान देश इन्हें भूल नहीं सकता। वीर महाराणा प्रताप के संघर्ष की परिकल्पना भील बहादुरों के बिना नहीं की जा सकती। प्रधानमंत्री ने कहा कि जनजातीय सम्मेलन पर कुछ लोगों को हैरानी होती है। ऐसे लोगों को विश्वास ही नहीं होता कि जनजातीय समाज का भारत की संस्कृति को मजबूत करने में कितना बड़ा योगदान रहा है। देश को अंधेरे में रखा गया। और अगर बताया भी गया तो बहुत ही सीमित दायरे में जानकारी दी गई। आजादी के बाद इतने दशक तक सरकार चलाने वालों ने अपने स्वार्थ को प्राथमिकता दी। पीएम ने कहा कि गुजरात का मुख्यमंत्री बनने के बाद मैंने वहां पर जनजातीय समाज में बदलाव के लिए बहुत सारे अभियान शुरू किए। जब देश ने मुझे 2014 में आपकी सेवा का मौका दिया तो मैंने जनजातीय समुदाय के हितों को अपनी सर्वोच्च प्राथमिकता में रखा। आज सही मायने में आदिवासी समाज को देश के विकास में भागीदारी दी जा रही है। उन्होंने कहा कि पहले की सरकारों में आदिवासी समाज को आगे बढ़ाने के लिए जरूरी राजनीतिक इच्छाशक्ति नहीं थी। या बहुत कम थी। आदिवासी सृजन को बाजार से नहीं जोड़ा गया। पहले की सरकारें सिर्फ 8-10 वन उपज पर एमएसपी दिया करती थीं। आज हमारी सरकार 90 पर दे रही है। हमारी सरकार ने जंगल को लेकर भी संवेदनशील कदम उठाए। राज्य में 20 लाख जमीन के पट्टे देकर जनजातीय भाइयों की चिंता दूर की। आदिवासी और शिक्षा पर भी बल दे रही है।

आज मुझे यहां 50 एकलव्य मॉडल चलाने का अवसर मिला। हमारा लक्ष्य देश में ऐसे लगभग साढ़े सात सौ स्कूल खोलने का है। इसमें से कई स्कूल खुल भी गए हैं। सात साल पहले हर छात्र पर सरकार करीब 40 हजार खर्च करती थी, जो आज बढ़कर एक लाख हो चुका है। इससे जनजातीय छात्र-छात्राओं को अधिक सुविधा मिल रही है। केंद्र सरकार हर साल स्कॉलरशिप भी दे रही है।

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

उच्च शिक्षा और रिसर्च से जोड़ने के लिए भी अभूतपूर्व काम किया जा रहा है। जनजातीय समाज के बच्चों को एक बहुत बढ़ी दिक्कत भाषा की भी होती थी, नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में स्थानीय भाषा में होगी। इसका लाभ हमारे बच्चों को मिलना तय है। जनजाति समाज के आत्मविश्वास के लिए, अधिकार के लिए हम दिन-रात मेहनत करेंगे। हम इस संकल्प को फिर दोहरा रहे हैं कि जैसे हम गांधी जयंती मनाते हैं, सरदार पटेल की जयंती मनाते हैं, वैसे ही भगवान बिरसा मुंडा की जयंती हर साल जनजातीय गौरव दिवस के रूप में पूरे देश में मनाई जाएगी।

संदर्भ

1. 1766-1772 - राजा जगन्नाथ सिंह के नेतृत्व में चुआड़ विद्रोह।
2. 1770-1787 - चट्टग्राम पहाड़ी क्षेत्र में चकमा विद्रोह।
3. 1771-1809 - जंगल महलों की भूमिज जनजातियों द्वारा चुआड़ विद्रोह।
4. 1774-1779: ब्रिटिश सेनाओं और मराठों के खिलाफ बस्तर राज्य में हलबी जनजातियों द्वारा हलबा डोंगर।
5. 1778: अंग्रेजों के खिलाफ छोटा नागपुर के पहाड़िया सरदारों का विद्रोह।
6. 1784-1785: महाराष्ट्र में महादेव कोली जनजाति और संताल जनजाति के तिलका मांझी का विद्रोह।
7. 1789: अंग्रेजों के खिलाफ छोटानागपुर के तामार का विद्रोह।
8. 1794-1795: तामारों ने फिर से विद्रोह किया।
9. 1798-1799: दुर्जन सिंह का चुआड़ विद्रोह।
10. 1798: छोटानागपुर में पंचेट एस्टेट की बिक्री के खिलाफ आदिवासियों का विद्रोह।
11. 1812: वायनाडी में कुरिचियार और कुरुम्बर का विद्रोह।
12. 1825: सिंगफो ने असम के सादिया में ब्रिटिश पत्रिका पर हमला किया और आग लगा दी।
13. 1833: गंगा नारायण सिंह के नेतृत्व में बीरभूम में भूमिज विद्रोह।
14. 1843: सिंगफो प्रमुख निरंग फिदु ने ब्रिटिश गैरीसन पर हमला किया और कई सैनिकों को मार डाला।
15. 1849: कदमा सिंगफो ने असम में ब्रिटिश गांवों पर हमला किया और कब्जा कर लिया गया।
16. 1850: प्रमुख बिसोई के नेतृत्व में खोंड जनजाति ने उड़ीसा की सहायक नदियों में विद्रोह किया।
17. 1855: सिद्धू और कान्हू के नेतृत्व में राजमहल हिल्स में अंग्रेजों के खिलाफ संथाल समुदाय द्वारा संताल हुल।
18. 1857: 1857 के व्यापक विद्रोह के हिस्से के रूप में छोटा नागपुर में चेरो और खारवार विद्रोह ।
19. 1857-1858: भील ने 1857 के विद्रोह के हिस्से के रूप में भगोजी नाइक और काजर सिंह के नेतृत्व में विंध्य और सतपुड़ा पर्वतमाला के बीच विद्रोह किया।
20. 1859: एबरडीन की लड़ाई में अंडमानी।
21. 1860: मिजो ने त्रिपुरा राज्य पर छापा मारा और 186 ब्रिटिश विषयों को मार डाला।
22. 1860-1862: पूर्वी बंगाल और असम में जयंतिया पहाड़ियों में सिंटेंग विद्रोह।
23. 1861: जुआंग समुदाय ने उड़ीसा में विद्रोह किया।
24. 1862: कोया समुदाय ने गोदावरी जिले में मुत्तादेर्स के खिलाफ विद्रोह किया।
25. 1869-1870: संथालों ने एक स्थानीय सम्राट के खिलाफ धनबाद में विद्रोह किया। विवाद सुलझाने के लिए अंग्रेजों ने की मध्यस्थता।
26. 1879: नागा ने असम में विद्रोह किया।
27. 1879: कोया ने तमंदोरा के नेतृत्व में विशाखापत्तनम हिल ट्रैक्ट एजेंसी के मलकानगिरी में विद्रोह किया।
28. 1883: हिंद महासागर में अंडमान और निकोबार द्वीप समूह के प्रहरी आदिवासी लोगों ने अंग्रेजों पर हमला किया।
29. 1889: मुंडा द्वारा छोटा नागपुर में अंग्रेजों के खिलाफ जन आंदोलन।
30. 1891: एंग्लो-मणिपुरी युद्ध जहां अंग्रेजों ने मणिपुर राज्य पर विजय प्राप्त की।
31. 1892: लुशाई लोगों ने बार-बार अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया।
32. 1899-1900: बिरसा मुंडा के नेतृत्व में मुंडा आदिवासी समुदाय द्वारा विद्रोह।
33. 1910: बस्तर के मध्य प्रांत के बस्तर राज्य में बस्तर विद्रोह।
34. 1913-1914: बिहार में ताना भगत आंदोलन।
35. 1913: अरावली रेंज की मानगढ़ पहाड़ियों में भीलों का विद्रोह।
36. 1917-1919: मणिपुर में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के खिलाफ उनके सरदारों के नेतृत्व में कुकी विद्रोह जिसे हाओस कहा जाता है।
37. 1920-1921: ताना भगत आंदोलन फिर हुआ।
38. 1922: अल्लूरी सीताराम राजू के नेतृत्व में कोया आदिवासी समुदाय ने गोदावरी एजेंसी में अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया।
39. 1932: मणिपुर में 14 वर्षीय रानी गैडिंल्यू के नेतृत्व में नागाओं ने विद्रोह किया।

| ISSN: 2395-7639| www.ijmrset.com| Impact Factor: 7.580 | A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

|| Volume 8, Issue 1, January 2021 ||

|DOI:10.15680/IJMRSETM.2021.0801007|

40. 1941: हैदराबाद राज्य के आदिलाबाद जिले में ब्रिटिश सरकार के खिलाफ सहयोग से गोंड और कोलम ने विद्रोह किया।
41. 1942: जयपोर राज्य के कोरापुट में लक्ष्मण नाइक के नेतृत्व में आदिवासी विद्रोह।
42. 1942-1945: अंडमान और निकोबार द्वीप समूह की जनजातियों ने द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जापानी सैनिकों द्वारा अपने द्वीपों पर कब्जे के खिलाफ विद्रोह किया।

Impact Factor:
7.580

INTERNATIONAL JOURNAL
OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

+91 99405 72462 +91 63819 07438 ijmrsetm@gmail.com

www.ijmrsetm.com